अवध के किसानों की समस्याएँ एवं उनका आंदोलन

डॉ. ओंकार दत्त चतुर्वेदी

Assistant Teacher- Hindi , Little Flower School, Raptinagar, Chargawan, Gorakhpur

सार

अवध के किसानों का आंदोलन (1920-1922) ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन और बड़े जमींदारों (तालुकेदारों) के अत्यधिक शोषण के खिलाफ एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक किसान संघर्ष था। [1, 2]

किसानों की मुख्य समस्याएँ

- अत्यधिक लगान और करः तालुकेदारों और जमींदारों द्वारा किसानों से बहुत अधिक भू-राजस्व और लगान वसूला जाता था। [1]
- बेगार प्रथाः किसानों को बिना किसी पारिश्रमिक या मजदूरी के जमींदारों के खेतों पर जबरन काम (बेगार) करना पड़ता था। [1]
- जबरन बेदखली और पट्टे की अनिश्चितताः किसानों को भूमि पर कोई स्थायी अधिकार प्राप्त नहीं था और उन्हें मनमाने ढंग से जमीन से बेदखल कर दिया जाता था। [1]
- अवैध कर (नज़राना): लगान के अलावा किसानों से विभिन्न प्रकार के गैर-कानूनी कर और 'नज़राना' वसूले जाते थे। [1]
- प्रथम विश्व युद्ध का प्रभावः युद्ध के बाद महंगाई और करों में हुई भारी वृद्धि से किसानों की स्थिति दयनीय हो गई थी। [1]

परिचय

किसान आंदोलन

- संयुक्त प्रांत किसान सभा (1918): सबसे पहले गौरीशंकर मिश्र, इंद्र नारायण द्विवेदी और मदन मोहन मालवीय के प्रयासों से संयुक्त प्रांत किसान सभा का गठन हुआ, जिसने लगान में वृद्धि का विरोध किया। [1]
- अवध किसान सभा का गठन (1920): अक्टूबर 1920 में प्रतापगढ़ में बाबा रामचंद्र के नेतृत्व में अवध किसान सभा की स्थापना हुई, जिसमें जवाहरलाल नेहरू और अन्य कांग्रेसी नेताओं ने भी सक्रिय सहयोग दिया। [1]
- आंदोलन के तरीकेः[1,2,3]
  - किसानों ने बेदखली वाली जमीन पर खेती करने से इनकार किया।
  - बेगार और अवैध कर न देने की शपथ ली गई।
  - बैठकों में 'रामचरितमानस' का पाठ करके किसानों को एकजुट किया गया और "जय-जय सीताराम" का नारा लोकप्रिय हुआ। [1, 2, 3]
- एका आंदोलन (1921-22): हरदोई, बहराइच और सीतापुर जैसे क्षेत्रों में मदारी पासी के नेतृत्व में 'एका आंदोलन' चला, जो अधिक उग्र हो गया। इसमें किसानों ने पंचायत के माध्यम से अपने फैसले करने और लगान न चुकाने का संकल्प लिया। [1, 2, 3]

- आंदोलन का परिणाम: इस व्यापक संघर्ष के दबाव में आकर ब्रिटिश सरकार को मार्च 1921 में 'अवध रेंट एक्ट' पास करना पड़ा, जिसमें तालुकेदारों को निर्देश दिया गया कि वे किसानों को 7 वर्षीय पट्टे के स्थान पर कुछ राहत दें। बाद में पुलिस और प्रशासन के कठोर दमन से यह आंदोलन 1922 तक शांत हुआ। [1, 2]

भारत में किसान आंदोलनों का इतिहास गौरवशाली रहा है। ऐसे आंदोलनों में अवध किसान आंदोलन सबसे अहम माना जाता है। सौ साल पहले उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ के रुरे गांव में रामायण के मंच से प्रारम्भ हुए इस आंदोलन ने ब्रिटिश हुकूमत की चूलें हिला दी थी।देश के सबसे पुराने संगठनों में शुमार अवध किसान सभा की स्थापना 17 अकटुबर 1919 को प्रतापगढ़ की पट्टी तहसील के रूरे गांव में हुई थी। इसकी स्थापना बैठक में देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू भी शामिल थे।

क्रांतिकारी तेवरों वाले अवध किसान आंदोलन के इस गौरवशाली आंदोलन पर इतनी धूल जम चुकी है कि अवध के किसान भी इसे विस्मृत कर चुके हैं। हालांकि इस पर तमाम शोध हुए, ढेरों पुस्तकें भी लिखी गईं, फिर भी इस आंदोलन की नींव के पत्थरों पर लोगों का ध्यान कम ही गया। अवध किसान सभा को पूरे अवध में खड़ा करने का मूल विचार इलाहाबाद हाईकोर्ट के वकील माताबदल पांडेय का था जो प्रतापगढ के ही निवासी थे।

इलाहाबाद से प्रकाशित अंग्रेज़ी दैनिक इंडिपेंडेंट के 27 अक्तूबर 1920 के अंक में विस्तार से यह खबर प्रकाशित की गयी थी कि 17 अक्टूबर 1920 को अवध किसान सभा का गठन प्रतापगढ़ के रूरे गांव में आयोजित किसानों की एक सभा में किया गया। इस सभा में करीब पांच हजार किसान शामिल हुए थे।इस सभा में वकील माता बदल पांडेय ने पूरे अवध क्षेत्र के लिए किसान सभा बनाने पर बल दिया था। इस बैठक का एजेंडा 150 ग्रामों में पहले ही स्थापित किसान सभाओं को मिलाकर प्रतापगढ़ जिले में किसानों का सक्रिय संगठन बनाना था। इस सभा में पंडित जवाहरलाल नेहरू, प्रतापगढ़ के तत्कालीन डिप्टी कमिश्नर वैकुंठ नाथ मेहता, संयुक्त प्रान्त किसान सभा के गौरी शंकर मिश्र, रायबरेली के किसान नेता माताबदल मुराई, बाबा राम चन्द्र, सहदेव सिंह और झींगुरी सिंह मौजूद थे। सभा में मौजूद लोगों ने माता बदल पांडेय की सलाह पर मुहर लगाई।

विचार-विमर्श

किसानों के इस नवगठित संगठन का नाम अवध किसान सभा रखा गया। माता बदल पांडेय को इस सभा का मंत्री चुना गया। इस आंदोलन को नेतृत्व देने वाले नेताओं में बाबा रामचंद्र के साथ स्थानीय नेता सहदेव सिंह, झींगुरी सिंह, अयोध्या, भगवानदीन, काशी, अक्षयवर सिंह, माताबदल मुराई समेत इलाहाबाद के कई नामों का उल्लेख मिलता है।[4,5,6]

उल्लेखनीय है कि अवध किसान सभा की मातृ संस्था रूरे किसान सभा की स्थापना सहदेव सिंह ने 1914 में ही की थी। रुरे गांव के ही झींगुरी सिंह और उनके चचेरे भाई दृगपाल सिंह के इसमें शामिल होने पर इसमें जान आ गई। झिंगुरी सिंह ने ही फीजी से लौटे गिरमिटिया बाबा रामचंद्र को इस सभा से जोड़ा। बाबा रामचन्द्र में गजब की संगठन शक्ति थी। देखते ही देखते एक माह में ही अवध में इस संगठन का सघन विस्तार हो गया। यही नहीं उत्तर प्रदेश किसान सभा की जिला इकाइयों के विलय भी अवध

किसान सभा में हो गया। इसके बाद एक ऐसा इतिहास रचा गया जो कालांतर में भारत के किसान आंदोलन का एक स्वर्णिम अध्याय बन गया।

जनश्रुतियों के अनुसार राम चरित मानस की चौपाइयों ने इस आंदोलन को धार दी। किसानों को बैठक की सूचना देने के लिए बाबा रामचन्द्र किसी पेड़ पर चढ़ कर जय जय सीताराम का उद्घोष करते थे। यह संकेत था। कुछ ही पल में हजारों किसानों का मजमा लग जाता था। अवध किसान सभा की सदस्यता का तरीका भी अनूठा था । सभा की बैठकों में एक नाली खोदी जाती थी और उसमें पानी भर दिया जाता था। इसे मां गंगा का स्वरूप माना जाता था। किसी भी किसान को संगठन का सदस्य बनने के पहले इसी नाली में खड़े होकर मां गंगा की सौगंध लेनी पड़ती थी।

अवध किसान सभा की बैठकों में किसानों की समस्याओं पर चर्चा होती थी। इस दौरान राम चरित मानस की चौपाइयों का सस्वर पाठ होता था। बाबा रामचंद्र की ख्याति उन दिनों रामचरित मानस के अध्येता के तौर पर हो चुकी थी। रामचरित मानस की एक पंक्ति “राज समाज विराजत रूरे” का रूपांतरण इस रूप में हो गया – सकल समाज विराजत रुरे। रामचन्द्र सहदेव झींगुरे।। अवध किसान आंदोलन में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी इसकी एक और विशेषता थी। महिला किसान और खेतिहर मज़दूरिनों ने क्रांतिकारी भावना के साथ इस आंदोलन में योगदान दिया था। किसानिनों की क्रांतिकारी भावना का मूरत स्वरूप किसानिन सभा थी, जिसे भारत की कामकाजी महिलाओं का पहला संगठन माना जाना चाहिए।

इस तरह बहुत ही कम समय में अवध के किसानों का आंदोलन विस्तारित हो गया। एक बार बाबा रामचंद्र के नेतृत्व में सैकड़ों किसानों का जत्था रूरे से पैदल चलकर महात्मा गांधी से मिलकर अपनी व्यथा सुनाने 6 जून 1920 को इलाहाबाद पहुंचा था। लेकिन गांधी जी वहां से वापस जा चुके थे। किसान बलुआघाट पर डेरा जमाए रहे औऱ वहां उनसे मिलने पंडित जवाहरलाल नेहरू, पुरुषोत्तम दास टंडन और गौरीशंकर मिश्र आदि नेता पहुंचे। बाबा ने उन्हें किसानों की व्यथा सुनाई और हालात का जायज़ा लेने का न्योता भी दिया। इसके बाद पंडित नेहरू ने प्रतापगढ़ के पट्टी क्षेत्र के गांवों का दौरा किया।[7,8,9]

परिणाम

अवध किसान सभा का गठन 17 अक्टूबर, 1920 ई. को किया गया था। 'उत्तर प्रदेश किसान सभा' का गठन 1917 में मोतीलाल नेहरू, मदन मोहन मालवीय और गौरीशंकर मिश्र आदि के प्रयासों से हुआ था। महात्मा गाँधी के 'खिलाफत आन्दोलन' के सवाल पर किसान सभा में मतभेद प्रकट होने लगे, और अवध के किसान नेताओं ने बाबा रामचन्द्र के नेतृत्व में 1920 में 'उत्तर प्रदेश किसान सभा' से नाता तोड़कर 'अवध किसान सभा' का गठन कर लिया।

गठन

वर्ष 1917 में पंडित मोतीलाल नेहरू, पंडित मदन मोहन मालवीय और गौरीशंकर मिश्र ने किसानों के हक में 'उत्तर प्रदेश किसान सभा' का गठन किया था। 'उत्तर प्रदेश किसान सभा' में अवध की सर्वाधिक भागीदारी थी। यह किसान सभा किसानों के हक में ब्रिटिश हुकूमत के सामने माँगे रखती थी और दबाव डालकर वाजिब मांगें मंगवाती थी। 1919 ई. के अन्तिम दिनों में किसानों का संगठित विद्रोह खुलकर सामने आया। प्रतापगढ़ ज़िले की एक जागीर में 'नाई धोबी बंद' सामाजिक बहिष्कार संगठित कारवाई की पहली घटना थी। लेकिन राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के नेतृत्व में किये जा रहे 'खिलाफत आंदोलन' के सवाल पर 'उत्तर प्रदेश किसान सभा' में तीखे मतभेद उभर कर सामने आने लगे, जिसके फलस्वरूप बाबा रामचन्द्र के व्यक्तिगत प्रयासों से 17 अक्टूबर, 1920 ई. को प्रतापगढ़ ज़िले में 'अवध किसान सभा' का गठन किया गया। प्रतापगढ़ ज़िले का 'खरगाँव' किसान सभा की गतिविधियों का प्रमुख केन्द्र था।

अन्य इकाइयों का विलय

अवध की तालुकेदारी में ग्राम पंचायतों के नेतृत्व में किसान बैठकों का सिलसिला शुरू हो गया। अवध के किसान नेताओं में बाबा रामचन्द्र, गौरीशंकर मिश्र, माताबदल पांडेय, झिंगुरी सिंह आदि शामिल थे। 'उत्तर प्रदेश किसान सभा' से नाता तोडकर 'अवध किसान सभा' का गठन हो चुका था, और एक महीने के भीतर ही अवध की 'उत्तर प्रदेश किसान सभा' की सभी इकाइयों का 'अवध किसान सभा' में विलय हो गया। इन नेताओं ने प्रतापगढ की पट्टी तहसील के खरगाँव को नवगठित किसान सभा का मुख्यालय बनाया और यहीं पर एक किसान कांउसिल का भी गठन किया। 'अवध किसान सभा' के निशाने पर मूलतः ज़मींदार और ताल्लुकेदार थे। उत्तर प्रदेश के हरदोई, बहराइच एवं सीतापुर ज़िलों में लगान में वृद्धि एवं उपज के रूप में लगान वसूली को लेकर अवध के किसानों ने 'एका आन्दोलन' नाम का आन्दोलन चलाया। इस आन्दोलन में कुछ ज़मींदार भी शामिल थे। इस आन्दोलन के प्रमुख नेता 'मदारी पासी' और 'सहदेव' थे। ये दोनों निम्न जाति के किसान थे।

अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं का प्रभाव

'अवध किसान सभा' पर अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं का भी बखूबी प्रभाव वडा था। अवध में जिस समय किसान अंगडाई ले रहे थे, उसी समय रूस में 'बोल्सेविक क्रांति' हुई तथा रूस पर जापान की विजय हुई थी। इसीलिए ब्रिटिश हुकूमत आन्दोलनकारी किसानों के लिए बोल्सेविक, लुटरे और डाकू जैसे शब्दों का प्रयोग करती थी। द्वितीय विश्वयुद्ध के छंटनीशुदा सैनिकों ने भी किसान आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। 'अवध किसान सभा' में देहाती बुद्धिजीवियों, जिसमें बाबा, साधु और फ़कीर आदि आते थे, ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। किसान आन्दोलन में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी 'अवध किसान सभा' की महत्वपूर्ण विशेषता थी। आगे चलकर महिलाओं की संगठित शक्ति का प्रतिरूप 'अखिल भारतीय किसानिन सभा' के रूप में सामने आई। 'अखिल भारतीय किसानिन सभा' शायद भारत में आम महिलाओं का पहला संगठन था।[1]

कहा जाता है कि सर्वहारा वर्ग किसानों के संघर्ष में किसानों का स्वाभाविक सहयोगी होता है। लेकिन उस समय अवध में सर्वहारा वर्ग तलाशने पर भी नहीं मिलते। क्योंकि अवध का समाज खेतिहर मज़दूरों का था, जिन पर हमेशा बेदख़ली की तलवार लटकी रहती थी। वास्तव में अवध में किसान थे ही नहीं, जिन्हें कुछ इतिहासकार किसान कहते थे, वह तो खेतिहर मज़दूर थे। अवध का समाज यूरोप के समाज से भिन्न था। इस ओर पश्चिमी इतिहासकार ध्यान नहीं देते।[10,11,12]

अवध किसान आन्दोलन (1920-22) प्रारम्भ हुआ. यहाँ स्थाई बंदोबस्त वाली भूमि व्यवस्था के दलाल भू–स्वामी ने जबरिया लगान, नजराने और बेगारी कठोर रूप में लागू कर दी थी. बाबा रामचंद्रदास, सहदेव सिंह और झिंगुरी सिंह के नेतृत्व में रूरे किसान सभा से शुरू हुए इस आन्दोलन ने कुछ ही महीनों में एक और अवध के तल्लुकोदारों और ब्रिटिश सरकार के लिए चुनौती खड़ी कर दी थी. बाबा रामचंद्र गिरमिटिया मजदूर के रूप में कार्य करने फिजी गए थे. वहां से वापिस लौटने के बाद उन्होंने अवध क्षेत्र के जिलों में जाकर किसानों के बीच घूम घूमकर उनकी समस्या जानी, समझी. किसानों के चेतना स्तर पर जाकर बातचीत की, रामायण जनचेतना में कहीं गहरे से जड़ जमाई है. उन्होंने रामायण का पाठ करना शुरू कर दिया. रामायण के माध्यम से बाबा रामचंद्र किसानों को इकठ्ठा करके उनसे रूबरू होते और किसान जीवन की समस्याओं पर चर्चा करते, उन्हें समाधान खोजने को कहते थे. स्वयं को भी किसानों के ऊपर होने वाले जुल्म और शोषण के खिलाफ प्रतिकार के लिए तैयार रखते थे. किसान थोड़े ही दिन में बाबा रामचंद्र को अपना अगुआ घोषित करते हैं. किसान की आपसी एकता और संगठन इतना मजबूत हो गया कि थोड़ा बहुत जुल्म होता और वे उसके खिलाफ उठ खड़े होते और उसके विरुद्ध संघर्ष छेड़ देते. अवध के क्षेत्र में बढ़ते किसान संघर्ष की चेतना से भयभीत होकर तत्कालीन राजसत्ता ने उनके नेताओं को गिरफ्तार कर लिया था, जिस वजह से हजारों की संख्या में किसानों ने जेल को घेर लिया था. मजबूर होकर सरकार ने उनको बिना शर्त रिहा कर दिया था.“1920 ई. के अंत में कुछ किसान नेताओं की छोटे अपराधों में गिरफ्तारी नें समस्याओं के अंतर्विरोध को और तीखा कर दिया. उनका मुकदमा प्रतापगढ़ शहर में होने वाला था, लेकिन सुनवाई के अवसर पर किसानों ने हजारों की संख्या से अदालत का अहाता खचाखच भर दिया था. हजारों ग्रामीण किसान उसी जेल के रास्ते पर खड़े थे, जिसमें किसान नेता रखे गए थे. मजिस्ट्रेट ने पहले तो सुनवाई स्थगित करने का निश्चय लिया लेकिन जब यह देखा कि भीड़ ने जेल को घेर रखा है तो जेल के अन्दर ही सुनवाई करके नेताओं को छोड़ दिया गया. जवाहरलाल के अनुसार ‘यह किसानों की एक बड़ी जीत थी जिसने उनके मन में अपने संख्या बल के बारे में विश्वास पैदा किया." 19

इस घटना के बाद अवध क्षेत्र के किसानों की एकता बढ़ गयी जिसमें उन्हें अपनी मुक्ति और जरूरत पूरी होने की आशा दिखने लगी. उन्होनें लगान देना बंद कर दिया, जमींदारों की फसल और पूँजी और बाजार से जरूरी चीजें छीनकर अपनी जरूरी जरूरत पूरी करने लगे. किसान अपने आन्दोलन को व्यापक बनाने के लिए जगह–जगह सभाओं का आयोजन करने लगे. इन किसानों के वर्ग संघर्ष को शुरूआती स्तर पर थोड़ी सफलता मिली. उन्होनें जमींदार और राजाओं को भगाकर उनके मजबूत इलाके में भेज दिया, जहाँ उनके अंग्रेज मालिक लाखों की सेना के साथ ऐश कर रहे थे. अंग्रेजों ने अवध प्रांत सेना भेज दी. वहीं किसान नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया. किसानों पर राजकीय आतंक के साथ भयानक दमन हुआ. साम्राज्य विरोधी ताकतें भी इसका मौन

समर्थन करती रही. "वहीं युक्त प्रान्त के वकीलों की शहरी किसान सभा और कांग्रेस के जमींदार समर्थक चरित्र का पोल खोल दिया. अवध में असुरक्षित काश्तकारों ने लड़ाइयां लड़ी जो बेदखली के कारण सर्वहारा ही थे. 1921 ई. में बाबा रामचंद्र की गिरफ्तारी के कागजात आज भी प्रतिबंधित हैं. इससे पता चलता है कि यह आन्दोलन क्यों विफल किया गया."20

अवध किसान आन्दोलन में सामंती तत्वों और उनके गुंडों को किसान पराजित करके खदेड़ देते हैं. साम्राज्यवादी अंग्रेजी सेना अपने पालतू वफादार जमींदारों की सहायता में आ जाती है. ये अंग्रेजी राजसत्ता का जमींदारों को संरक्षण था. कांग्रेस और गाँधी किस तरह इन सामंती तत्वों में राजभक्ति की जगह देशभक्ति की भावना पहचान लेते हैं.' किसानों को अभी चुप रहना चाहिए, ये स्वाधीन होने का समय है जमींदारों का जुल्म शोषण सह लेना चाहिए, जबकि सामंती व्यवस्था अंग्रेजी साम्राज्यवादी संरचना के आधार के अनुरूप ही थी. सामंतों, जमीदारों को बचाना उनके जुल्म को टालना और छुपाना अंग्रेजी साम्राज्यवाद को ही मजबूत करना था. स्वाधीनता आन्दोलन के समय कांग्रेस के अंग्रेजी साम्राज्यवाद विरोध और सामंती प्रेम के संबंधों का सूक्ष्मता से अध्ययन से ही वास्तविक वर्ग पक्षधरता समझ में आ सकती है.[13,14,15]

इसके बाद देश में दो बड़े किसान आन्दोलन हुए, जिन्हें हम तेभागा औए तेलंगाना के रूप में जन सकते है. "तेभागा और तेलंगाना गरीब किसानों द्वारा चलाए गए महत्वपूर्ण आन्दोलन थे. दोनों औपनिवेशिक दौर में शुरू हुए थे. भूमिहीन किसानों का भूमि पर उनका वास्तविक हक़ दिलाने की कोशिश करते थे. तेलंगाना किसान आन्दोलन स्वतंत्रता के बाद भी जारी रहा, जिसका तात्कालिक अंत 'प्रगतिशील, जनपक्षधर, समाजवादी हृदयवाले स्वतंत्र भारत' के पहले मुखिया पं. जवाहरलाल नेहरु की सेना ने बड़े देशी अन्दाज में किया था. तेलंगाना के किसान अमानुषिक शोषण और उत्पीड़न से जर्जरित थे. उनके सर पर कितने ही तरह के कानूनी और गैर कानूनी टैक्स थे, उसका हिसाब करना कठिन है. इन शोषकों में प्रधान व्यक्ति थे निजाम , उसके बाद थे जमींदार, जमींदार और देशमुखों का दल. जागीरदार थे बड़े जमींदार. करीब आधा तेलंगाना उनके अधिकार में था. बाकी आधा देशमुखों के हाथ में था. ये देशमुख एक ज़माने में निजाम के लिए लगान वसूल करने वाले अधिकारी थे.....निजाम के पास कुल जमीन थी. एक करोड़ पचास लाख बीघा. 15 लाख भू–दास इस जमीन पर खेती का काम करते थे. उससे निजाम की आय होती थी पांच करोड़ रूपए प्रतिवर्ष. उसके आलावा राज्य बजट निजाम 10 लाख रूपए प्रतिवर्ष पाते थे. इसके सिवाय हैदराबाद के अधिकांश कल कारखानें के बड़े बहादुर थे. निजाम के हीरा–मोती और सोने के आभूषणों का दाम कम से कम 600 करोड़ रूपए था.

निजाम के इस अमानुषिक शोषण शासन के हिस्सेदारों की कुल संख्या थी ग्यारह सौ. निजाम अपने इन 1100 लोगों से मिलकर हैदराबाद की एक करोड़ दस लाख जनता का शोषण करता था. इन 1100 जमींदारों और देशमुखं के पास कुल 1 करोड़ बीघा जमीन थी. पूरे राज्य के कुल जमीन के 5 भाग में 3 भाग. इन 1100 परिवारों में से सिर्फ 10 परिवारों की वार्षिक आय थी 10 करोड़ रूपए. हैदराबाद के किसानों पर कुल 80 करोड़ रूपए का कर्ज था. और इस कर्ज के अदाई किए हुए सूद का सब पैसा

इन्हीं दस परिवारों के हाथ में आता था. यह है भारत के सामंतवादी समाज के बड़े स्तम्भ हैदराबाद के सामंतवर्ग के शोषण का एक संक्षिप्त हिसाब. इसी शोषक वर्ग के कल्पनातीत शोषण और उत्पीड़न के विरुद्ध तेलंगाना के किसानों ने क्रांति की लाल पताका ऊड़ाई थी और इन्हें भगाकर ही तेलंगाना के किसानों ने एक करोड़ आठ लाख बीघा जमीन को शोषण मुक्ति किया था और इस शोषण मुक्त इलाके में प्रतिष्ठित की थी. भारत की प्रथम जनतांत्रिक शासन व्यवस्था."21

तेलंगाना में जनसंघर्ष से वहां किसानों का शासन स्थापित होने लगा. 1948 के पहले 6 महीने के अन्दर ही अत्याचारी जमींदार, देशमुख, जोतदार आदि के हाथ से 30 लाख बीघा जमीन छीन ली गयी. छीन लेने के साथ साथ ही वह जमीन गरीब किसानों, खेत मजदूरों आदि के बीच बाँट देने के बाद जमीन का मालिकाना हक़ उन किसानों का दे दिया.[16,17,18]

कुल तीन तरह की जमीन जब्त की गयी थी. पहली तो वह सब जमीन जो देशमुख, जमींदार ,जोतदार, आदि से छीन ली गयी थी, वह सभी जब्त कर ली गयी. दुसरे वह सब जमीन जो किसानों से देशमुख जमींदार, महाजन आदि ने छीनी थी, उसे जब्त कर जिनकी जमीनें थी, उन्हें लौटा दी गयी. तीसरे प्रोम्बाक या परती जमीन जब्त कर उसे किसानों में बाँट दिया गया.

निष्कर्ष

इस संघर्ष से किसानों पर जुल्म उत्पीड़न कम हुआ. उन्हें कई पुरानी परम्परागत प्रवृत्तियों से छूट मिली. "यह सामंतवादी शासन को ख़त्म करने के लिए किसानों का एक क्रन्तिकारी सशत्र संग्राम था. मुक्ति क्षेत्रों में किसान समितियों ने कृषि कार्यक्रमों को लागू किया. यद्यपि यह काम पूरा नहीं हो पाया. फिर भी 30 लाख एकड़ जमीन का वितरण किया गया, बेगार बंद कर दी गयी, अवैध शोषण और सामंतवादी दमन ख़त्म कर दिए गये. बेदखली बंद कर दी गयी और न्यूनतम मजदूरी लागू कर दी गयी. इस संघर्ष ने कृषि क्रांति के सवाल को बिल्कुल सामने ला दिया जिसके फलस्वरूप कांग्रेस पार्टी को भूमि सुधार कार्यक्रम लेने के लिए मजबूर होना पड़ा."22

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी का यह पहला सशस्त्र संघर्ष था. इसमें हज़ारों किसान तथा पार्टी गुरिल्ला मारे गए और बड़ी संख्या में कम्युनिस्ट कार्यकर्ता तीन से चार साल तक जेल में रहे. आजादी के बाद देश में सामाजिक आर्थिक उत्पीड़न (जुल्म) शोषण के खिलाफ कई महत्वपूर्ण किसान आन्दोलन हुए हैं. जिसमें नक्सलबाड़ी आन्दोलन, श्रीकाकुलम(केरल), भोजपुर(बिहार) और अन्य बहुत सारे आन्दोलन हुए. इनकी परंपरा और ऊर्जा के श्रोत औपनिवेशिक दौर में हुए कृषक व अन्य क्रन्तिकारी आन्दोलन ही थे. तेलंगाना से किसान आन्दोलन अपने संरचनात्मक स्वरुप में आने लगे. जो आज भी अपनी निरंतरता बनाए हुए है.[19-22]

संदर्भ

1. रामशरण जोशी: किसान समाज और दूसरे संघर्षशील जन. (लेख) हंस, अगस्त, 2006. पृ.101.

2. एल. नटराजनः भारत के किसान विद्रोह (1850-1980). पृ.28.

3. वही. पृ 29.

4. अभय चरण दासः भारतीय किसान. पृ 54-55.

5. कलकत्ता रिव्यू (लेख) (1856). पृ 238 240.

6. वही. पृष्ठ० 238

7. वही. पृष्ठ० 239

8. वही. पृष्ठ० 240

9. वही. पृष्ठ० 245

10. एल. नटराजनः भारत के किसान विद्रोह (1850-1980). पृ. 38

11. वही पृ 40

12. वही पृ 39-40

13. वही पृ 36-37

14. वाही. पृष्ठ०43

15. एल. नटराजनः भारत के किसान विद्रोह (1850-1980). पृ.43

16. रामशरण जोशीः किसान समाज और दूसरे संघर्षशील जन. (लेख) हंस, अगस्त, 2006. पृ.101

17. वही. पृ.101

18. गणेश शंकर विद्यार्थीः प्रताप (सप्ताहिक, 23, जुलाई 1917), प्रताप कार्यालय कानपुर.

19. रामाज्ञा शशिधरः किसान आंदोलन की साहित्यक जमीन. पृ 17.

20. महेद्र प्रतापः उत्तर प्रदेश में किसान आंदोलन. पृ. 58-59.

21. रामाज्ञा शशिधर: किसान आंदोलन: वैचारिक परिपेक्ष्य. (लेख) हंस, अगस्त, 2006. पृ.129

22. वीर भारत तलवार (संपादक): नक्सलबाड़ी के दौर में. पृ.459.